<u>अनुवांशिक रक्त विकार</u>
<u>सिकिलसेल एनीमिया, थैलेसीमिया तथा हीमोफीलिया</u>
<u>उपचार तथा रोकथाम</u>

मार्गदर्शिका

हीमोग्लोबिन लाल रक्त कोशिकाओं का प्रमुख घटक है, जिसका कार्य शरीर में आक्सीजन का संचार करना है जो शरीर की मेटाबोलिक क्रिया के लिए आवश्यक होता है। हीमोग्लोबिन की संरचना पॉलीपेप्टाइड चेन–ग्लोबिन तथा हीम से मिलकर होती है तथा यह अनुवांशिक नियंत्रण में होती है। इस अनुवांशिक संरचना में खराबी आने से कई रक्त विकार हो जाते है। ग्लोबिंन चेन की संरचना अनुवांशिक रूप से डिफेक्टिव होने से जो रक्त विकार होता है, उसको थैलेसीमिया कहते है तथा ग्लोबिन चेन की अमिनोएसिड संरचना में असमानता से रक्त कोशिका के स्वरूप में बदलाव आता है, उसे सिकिलसेल एनिमिया कहते है।

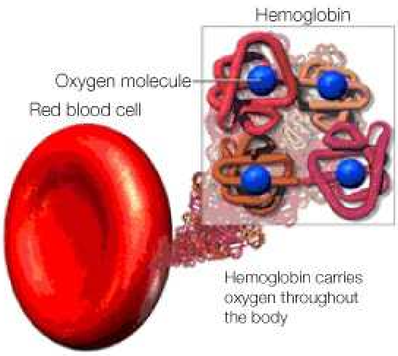

शरीर के अंदर रक्तप्रवाह निरन्तर रहता हैं किन्तु चोट लगने पर या आन्तरिक रक्तशिराओं के फटने पर रक्त स्त्राव को रोकने के लिए एक थक्का जम जाता है, जिससे रक्त का स्त्राव बन्द हो जाता है। इस थक्के को जमाने के लिए रक्त में कई कारक (Factor) होते है जिनकी कमी के कारण रक्त का थक्का जम नही पाता है और रक्त स्त्राव होता रहता है। इस रक्त विकार को हीमोफिलिया कहते है, जिसका संचार अनुवांशिक होता है, लड़कियां इस विकार को आगे बढ़ाती है तथा पुरूष संतानों को यह रोग होता है।

थैलेसीमिया, सिकिलसेल एनीमिया एवं हीमोफीलिया की रोकथाम हेतु प्रभावित क्षेत्रों में प्रभावित जन समूहों का सर्वेक्षण, प्रभावित परिवारों का चिन्हिकरण, आवश्यक नैदानिक सुविधाएं तथा जेनेटिक काउन्सिलिंग प्रमुख कार्य है।

सिकिलसेल एनीमिया

सिकिलसेल एनीमिया एक अनुवाशिक रक्त रोग है, जिसमें लाल रक्त कोशिकाओं में सामान्य हीमोग्लोबिन (A) के स्थान पर HbS हीमोग्लोबिन होने के कारण लाल रक्त कोशिकाएं आक्सीजन के अभाव में हसिया के आकार की हो जाती है। सिकिलसेल एनीमिया के लक्षण शिशु अवस्था में सामने आने लगते है इसमें रक्त कोशिकाएं टूटने लगती है, जिसके कारण हल्का पीलिया होने से बच्चे का शरीर पीला दिखाई देता है। तिल्ली बढ़ जाती है किन्तु निरन्तर रक्त प्रवाह अवरूद्व होने के कारण छोटी भी हो जाती है। रक्त गाढ़ा होने के कारण स्थानीय तौर पर छोटे–छोटे थक्के बनते रहते है जिससे शरीर के विभिन्न अंग प्रभावित होते है।

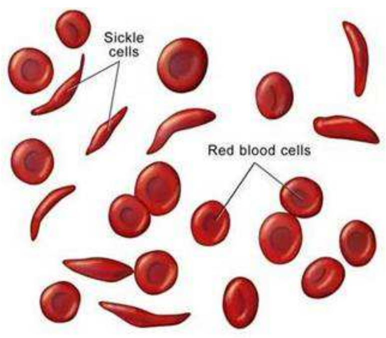

सिकिलसेल एनीमिया में रक्त का सूक्ष्मदर्शी चित्र

सिकिलसेल एनीमिया दो प्रकार का होता हैः–

1. **सिकिलसेल डिसीजः**–इसमें माता एवं पिता दोनों ही बीमारी के वाहक होते है तथा ग्रसित शिशु में इस बीमारी के लक्षण तीन माह से एक वर्ष की आयु में दिखने लगते है।
2. **सिकिलसेल ट्रेटः**– इसमें माता एवं पिता में से कोई एक बीमारी का वाहक होता है। प्रायः इस बीमारी के लक्षण पता भी नही चलता है।

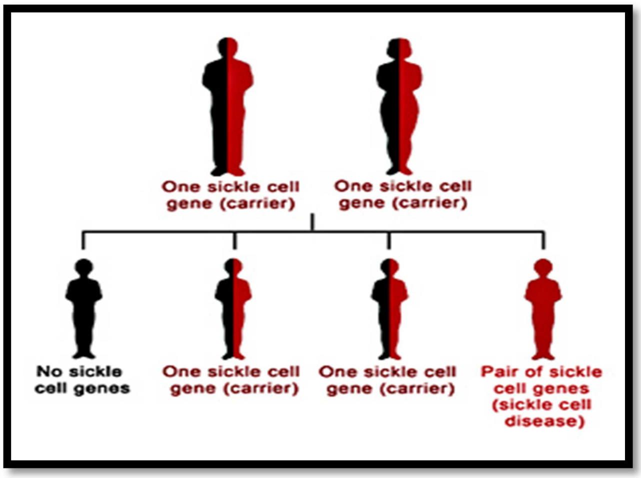

सिकिलसेल एनीमिया की अनुवांशिकता

प्रदेश में इससे सबसे ज्यादा प्रभावित अनुसूचित जन–जाति–प्रधान, पनिका, बरेरा,भिलाला तथा अनुसूचित जाति झारिया, मेहरा तथा डेहरिया प्रमुख रूप से प्रभावित है। पिछडें वर्ग में यादव, कुर्मी, काक्षी, लोधी, रंजक आदि में भी यह रक्त विकार पाया जाता है। अनुमानतः प्रदेश में प्रभावित जनसंख्या में 1000 व्यक्तियों में 08 सिकिलसेल एनिमिया से प्रभावित होते है, जिनकी संख्या लगभग 1.12 लाख है। प्रदेश में सिकिलसेल एनिमिया ग्रसित लगभग 3500 बच्चे प्रतिवर्ष जन्म लेते है। सबसे ज्यादा प्रभावित जिले, शहडोल, मण्डला, बडवानी, मन्दसौर, रीवा, जबलपुर, छिन्दवाडा, बैतूल, खरगोन, धार, झाबुआ। मध्यम प्रभावित जिले, बालाघाट,सिवनी,होशंगाबाद,देवास इंदौर तथा उज्जैन है रोग का प्रभाव रतलाम,नीमच,श्योपुर,मुरैना,ग्वालियर,दमोह तथा सतना में भी है। 1970 में सिकिलसेल एनिमिया प्रभावित रोगियों की औसत आयु 14 वर्ष थी जो टीकारोधक बीमारियों की रोकथाम, एन्टीबायोटिक प्रोफायलेक्सिस, रक्ताधान तथा उन्नत निदान तकनीकों की उपलब्धता के कारण अब औसत आयु 42 वर्ष तक हो सकती है।

सिकिलसेल एनिमिया के लक्षण एवं जटिलताएंः–

सिकिलसेल रक्त विकार में रक्त कोशिकाओं के टूटने तथा रक्त प्रवाह के अवरूद्व होने के कारण निम्न प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैः–

(i) संक्रमण में वृद्वि
(ii) पक्षाघात
(iii) पित्त की थैली में पथरी
(iv) हड्डियों में रक्त संचार रूकने से परिगलन
(v) शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता का कम होना
(vi) लिंग में रक्त का प्रसार नही होना
(vii) हड्डियों में संक्रमण
(viii) गुर्दे में खराबी
(ix) पांव में घाव होना
(x) रेटिना में खराबी आने से दृष्टि बाधित होना
(xi) गर्भवती महिला के शिशु में वृद्वि का रूकना
(xii) गर्भपात तथा प्रिएकलेम्पशिया
(xiii) शरीर में प्रायः दर्द होना
(xiv) हार्टफेलियर की स्थिति निर्मित होना

सिकिलसेल क्राइसिसः–यह अवस्था पांच प्रकार की हो सकती हैः–

(a) वासोऑक्लूसिव क्राईसिस
(b) स्पीलिनिक क्राईसिस
(c) एक्यूट चेस्ट सिन्ड्रोम
(d) एप्लास्टिक क्राईसिस
(e) हीमोलेटिक क्राईसिस

सीवियर एनीमिया होने पर 5 से 7 दिन में स्थिति गंभीर हो जाती है। लाल रक्त कोशिकाओं के असमान्य (हसिया के आकार का) होने के कारण कैपिलरीज़ (छोटी रक्त धमनियों) में रक्त का प्रवाह रूक जाता है। जिसके कारण से शरीर के अंगों में रक्त का संचार रूकने के कारण तीव्र दर्द होता है और अंगों में विकृती होती है। इस क्राईसिस की अवधि के रोगी में विभिन्न प्रकार के इन्फेक्शन तथा पानी की कमी होने पर स्थिति और गंभीर हो जाती है।

रक्त के प्रवाह के अवरूद्व होने के कारण इसका गंभीर प्रभाव तिल्ली के उपर भी पडता है। जिसके कारण से अचानक तिल्ली वृद्वि के साथ दर्द होता है। फेफडों में भी रक्त के प्रवाह अवरूद्व होने के कारण से सांस तेजी से चलने लगती है।

सिकिलसेल एनीमिया का निदानः–

स्क्रीनिंगः–

1. सिकलिंग टेस्टः–इस प्रक्रिया के माध्यम से चुने हुए जन समूहों में हीमोग्लोबिन संबंधी विकारों के वाहक होने की संभावना की जांच की जाती है। इन जन समूहों में जांच स्कूली छात्र, छात्रायें, विवाह पूर्व युवक एवं युवतियों में तथा गर्भधारण के पूर्व की जानी चाहिए।
2. गर्भ में बच्चे की जांचः–यदि माता तथा पिता दोनों ही सिकिलसेल जीन के वाहक हो तो गर्भ में बच्चे के रक्त की या **Amniotic Fluid** या कोरियोनिक विलाई सेपलिंग के माध्यम से गर्भ में ही इस बीमारी का पता लगाया जा सकता है।

सामान्य लेबोरेटरी जांचेः–

1. कम्पलीट ब्लड पिक्चरः–इसमें सामन्यतः हीमोग्लोबिन का स्तर 6 से 8 ग्राम **%** होता है साथ में रेटिकुलोसाईट्स की संख्या बढ़ी हुई मिलती है।

संदर्भ प्रयोगशाला में की जाने वाली जांचेः–

1. हीमोग्लोबिन इलेक्ट्रोफोरेसिसः–इस प्रक्रिया से HbS हीमोग्लोबिन पहचाना जा सकता है।
2. High Performance Liquid Chromatography**:-** यह जांच सिकिलसेल डिजीस के पुष्टिकरण के लिए महत्वपूर्ण है।
3. जेनेटिक टेस्टिंगः–मालिक्यूलर जांचें जैसे कि DNA विशलेषण जिससे की कठिन चिकित्सकीय मामलों का निदान किया जा सकता है। इस जांच की आवश्यकता कदाचित ही होती है।

उपचार एवं देख–रेखः–

सिकलसेल एनीमिया में निम्नलिखित उपचार के विकल्प अत्यन्त उपयोगी हैः–

1. फॉलिक एसिड एवं एन्टीबॉयोटिक का उपयोगः– जिन बच्चों में सिकिलसेल डिसीज होती है, उन बच्चों को शिशु रोग विशेषज्ञ की देख–रेख में रखना चाहिए। इन रोगियों को प्रारम्भ से 1 मिली.ग्राम प्रतिदिन फोलिक एसिड आजीवन लेना होता है।
2. हाइड्राक्सी यूरिया का उपयोगः– सिवियर एनीमिया में इस औषधि का उपयोग किया जाता है। जिससे रोगी की बीमारी का नियंत्रण होता है तथा जीवन अवधि में भी वृद्वि होती है। इन औषधियों को चिकित्सा विशेषज्ञ की निगरानी में लिया जाना चाहिए।
3. क्राईसिस में उपचारः– वॉजो ऑक्लूसिव क्राईसिस में दर्द दूर करने वाली औषधि जैसे कि ओपियम डेरीवेटिव्स दी जाती है। कम प्रभावित रोगियों को डाईक्लोफिनेक टेबलेट अथवा नेप्रोक्सन (Naproxen) टेबलेट दी जाती है। गंभीर रोगी को भर्ती करके उपचार किया जाता है। सांस में तकलीफ होने पर आक्सीजन दी जाती है तथा रक्ताधान या एक्चेंज रक्ताधान भी किया जाता है।
4. **बोनमेरो ट्रान्सप्लान्टः**–सिकिलसेल डिसीज में यह कारगर होता है, विशेषकर बच्चों के लिए प्रभावशाली उपचार है। सिकिलसेल डिसीज का पूरी तरह से इलाज मात्र इसी पद्वति से संम्भव है, परन्तु यह विधि अत्यधिक खर्चीली है तथा इसकी सुविधा हमारे देश में चुनिंदा शहरों में ही उपलब्ध होने के कारण अधिकांश जनता को इसका लाभ प्राप्त नही हो पाता है।
5. **रक्ताधानः–**
   इस चिकित्सकीय परिस्थिति में रक्ताधान की आवश्यकता जीवन के प्रारम्भिक काल में यदा–कदा होती है तथा नियमित रक्ताधान बाद के जीवन काल में आवश्यक हो सकती है।

a) <u>कभी–कभी रक्ताधान की आवश्यकता निम्न परिस्थितियों में हो सकती हैः–</u>

(i) हीमोलिसिस जो कि किसी संक्रमण या धमनियों में गंभीर रूप से अवरोध उत्पन्न होने के कारण होती है।

(ii) पारवो वायरस बी–19 के संक्रमण के कारण क्षणिक रूप से बोनमैरो की गतिविधि का रूक जाना।

(iii) रक्त का स्पलीन में रूक जाना

(iv) स्ट्रोक

(v) एक्युट चेस्ट सिन्ड्रोम

(vi) मल्टी आर्गन फेल्योर

(vii) शल्य चिकित्सा

(viii) प्रायपिज्म

उपरोक्त परिस्थितियों में एक्सचेन्ज ट्रान्सफ्यूजन ज्यादा उपयोगी है तथा इससे लौह तत्व का अधिभार भी कम होता है।

b) <u>नियमित रक्ताधान की आवश्यकता के संकेत</u>

(i) बार–बार होने वाले स्ट्रोक की रोकथाम के लिए मुख्यतः उन बच्चों में जिनमें ट्रान्सक्रेनियल डापलर टेस्ट से पता चला हो कि उनमें स्ट्रोक का खतरा अधिक है।

(ii) पल्मोनरी उच्च रक्तचाप एवं ह्रदय की कार्यक्षमता कम हो जाना।

(iii) लंबे समय से हो रहा दर्द या बीच–बीच में होने वाला गंभीर दर्द जो कि हाइड्राक्सी यूरिया के उपयोग से भी ठीक नही हो रहा है।

(iv) 2 या 3 साल से कम उम्र के बच्चे जिनमें पूर्व में स्पलीन में खून के रूक जाने की घटना हुई है तथा उनके स्प्लीन को शल्य चिकित्सा से निकालने की प्रक्रिया की जाना है।

(v) गर्भावस्था में।

<u>रक्ताधान से संबंधित खतरा</u>

(i) एलोइम्युनाईजेसन तथा विलंब में होनें वाले हीमोलिटिक घटनायें।

(ii) शरीर में लौह तत्व का अधिभार–चिलेशनथेरेपी उन मरीजों के लिए प्रस्तावित है, जिन्होनें कम से कम 20 बार ट्रान्सफ्यूजन कराया है तथा लीवर में लौह तत्व की मात्रा 7 मि.ग्रा/ग्राम है, (मानक एम.आर.आई की जांच के द्वारा मापी गई)।

(iii)संक्रमण

(iv) सेन्ट्रल वीनस केथेटर से संबंधित जटिलताएं, यदि वे उपयोग की गई है।

नियमित रूप से ट्रान्सफ्यूजन प्राप्त करने वाले सिकिल सेल के मरीजों के लिए रक्त की मात्रा एवं गुणवत्ता, थैलेसिमिया के मरीजों के उपयोग में लाये गये जाने वाले रक्त के जैसी ही हो।

<u>लौह तत्व का अधिभार एवं उसे निष्क्रीय करने की प्रक्रिया</u>

शरीर के लौह तत्व का अधिभार प्रमुख तौर पर ट्रान्सफ्यूजन किये गये रक्त की मात्रा पर निर्भर करता है। अतः हीमोग्लोबिन के विकारों से ग्रसित मरीजों में लौह तत्व के अधिभार का मापन अत्यन्त आवश्यक है, क्योकि गंभीर रूप से एनिमिया स्वयः ही आंतों से भोजन में उपस्थिति लौह तत्व के अवशोषण को प्रेरित करता है, जो कि पुनः शरीर में लौह तत्व के भार को बढ़ा देता है।

<u>लौह तत्व भार की मॉनिट्रिंग</u>

1. **सीरम फिरेटिनः–** यह एक सस्ती व सरल जांच है। क्रोनिक इन्फ्लेमेशन एवं लीवर संबंधित बिमारियां इस पैमाने को प्रभावित करती है। प्रत्येक 3 से 6 माह सीरम फेरेटिन की जांच की जानी चाहिए।

   लौह तत्व को निष्क्रीय करने की प्रक्रिया इस तरह से की जानी चाहिए की इसकी मात्रा 2500 µgm/ltr से कम रहें। (आदर्श तौर पर 1000µg/ltr से कम)

2. **लीवर में लौह तत्व का कंसट्रेशन**

- इसकी मात्रा लीवर बायोप्सी या फिर एम.आर.आई के माध्यम से की जा सकती है।
- यह पैमाना शरीर के पूर्ण लौह तत्व अधिभार को दर्शाता है तथा इसकी जांच वर्ष में एक बार की जानी चाहिए।

- इसकी मात्रा 5 मि.ग्रा0/ग्राम या उससे कम हो तथा किसी भी अवस्था में 7 मि. ग्रा0/ग्राम से अधिक ना हो।

3. ह्रदय में लौह तत्व

इसकी जांच कार्डियक एम.आर.आई टी–2 द्वारा की जाती है, 20 ms से कम वैल्यू है तो वो ह्रदय पर अधिभार को दर्शाता है तथा एल.वी (Left Ventricular) की कार्यक्षमता गंभीर रूप से प्रभावित होती है। अतः ऐसे मरीजों में लौह तत्व का निष्क्रीय करने का प्रभावशाली तरीका उपयोग में लाया जाना चाहिए।

सिकिलसेल डिजीस के मरीजों के लिए सामान्य दिशा–निर्देश

सिकिलसेल बीमारी (SS) वाले व्यक्ति को निम्नलिखित सावधानियां रखना फायदेमंद होता हैः–

1. ऐसा मरीज यदि खूब पानी पिए तो उसका रक्त पतला होने के कारण लाल रक्त कणों के हॅसिए के आकार में परिवर्तन की संभावना कम हो जाती है। उल्टी, दस्त का तुरन्त इलाज किया जाना चाहिए।
2. ऐसे मरीज को चाहिए कि वह ज्यादा भाग–दौड़ तथा शारीरिक मेहनत के काम न करें, क्योकि यदि वह व्यक्ति कम समय में अधिक मेहनत या खेल–कूद करेगा, तो उसके शरीर में आक्सीजन की कमी हो जाएगी।
3. चूकिं पहाड़ों पर आक्सीजन की कमी होती है, अतः ऐसे व्यक्ति को चाहिए कि वो उचे पहांड़ो पर न जाए।
4. ज्यादा ठंड से ऐसे व्यक्ति को बचना चाहिए, क्योकि यदि वातावरण ठंडा है तो हमारी त्वचा की छोटी रक्त नलिकाएं सिकुड़ जाती है, इससे रक्त का प्रवाह अवरूद्व होता है।
5. यदि शरीर में सक्रंमण हो तो उसका तुरन्त इलाज किया जाना चाहिए।

जिला स्तर पर किये जाने वाले कार्य

1. जिला अस्पताल में सिकलसेल क्लीनिक स्थापित करना।
2. जिला स्तर पर सिकलसेल डिसीज को डायग्नोज़ करना एवं प्रभावितों को इलाज उपलब्ध कराना।
3. जिले के सभी सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र जहां पर माइक्रोस्कोप उपलब्ध है वहां पर वृहत् स्क्रीनिंग कर सिकिलिंग टेस्ट करना।
4. ए.एन.सी क्लीनिक में आने वाली सभी गर्भवती महिलाओं की स्क्रीनिंग कर सिकलसेल हीमोग्लोबिन तथा बीटा थैलेसीमिया ट्रेट का परीक्षण करना। हाईरिस्क शादी–शुदा व्यक्तियों में बीमारी हेतु काउंसिल करना तथा जागरूकता लाना।
5. सिकलसेल डिसीज के डायग्नोसिस हेतु जिले के सभी चिकित्सा अधिकारियों एवं लेबोरेटरी टेक्नीशियन का प्रशिक्षण किया जाना।
6. सिकलसेल डिसीज के प्रभावितों के अभिभावकों को रोकथाम, स्वास्थ्य शिक्षा एवं स्वास्थ्य की देखभाल हेतु प्रशिक्षण देना।
7. जिला स्तर पर, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र स्तर पर प्रचार–प्रसार, स्वास्थ्य शिक्षा एवं जन–जागरूकता हेतु व्यापक अभियान आरंभ करना।

थैलेसीमिया

थैलेसीमिया भारतवर्ष में सबसे अधिक पाया जाने वाला अनुवांशिक रोग हैं। इस रोग में रक्त के घटक सामान्य हीमोग्लोबिन, जो शरीर में आक्सीजन का संचार करता है, उसके स्थान पर विकृत हीमोग्लोबिन का सृजन होता है, जिसके कारण लाल रक्त कण की आयु जो साधारणतः 110–120 दिन होती है, घटकर 10–15 दिन मात्र रह जाती है, जिससे खून की कमी होती है। इसके कारण ग्रसित बच्चे में शारीरिक और मानसिक विकास नही हो पाता है।

थैलेसीमिया के प्रकारः–

- अल्फा,बीटा,डेल्टा थैलेसीमिया–इन तीनों में बीटा थैलेसीमिया अधिक होता है।
- बीटा थैलेसीमिया दो प्रकार का होता है–
  - (a) थैलेसीमिया मेजर
  - (b) थैलेसीमिया माइनर (ट्रेट)

यह रोग भूमध्य सागर के आस–पास के देशों में व्याप्त है। विश्व में इसके लगभग 24 करोड केरियर है। भारतवर्ष में सिकन्दर के आकम्रण तथा अरबों के आगमन से सिंध, मुलतान, पंजाब तथा गुजरात में यह विकार उत्पन्न हुआ फिर भारत में कई जगह फैला। भारतवर्ष में इसके लगभग 3 करोड केरियर है तथा सिंधी,पंजाबी, गुजराती, हिन्दु तथा मुस्लिम मुख्य ग्रसित समुदाय है। ऐसा अनुमान है कि भारतवर्ष में थैलेसीमिया ग्रसित लगभग 20000–25000 बच्चे प्रतिवर्ष पैदा होते है। प्रदेश में अभी तक ऐसा कोई सर्वेक्षण नही हुआ है लेकिन अनुमानतः लगभग 800–1000 थैलेसीमिया से ग्रसित बच्चों का जन्म प्रदेश में प्रतिवर्ष होता है, जिनकी सबसे अधिक संख्या इंदौर, भोपाल तथा ग्वालियर में है।

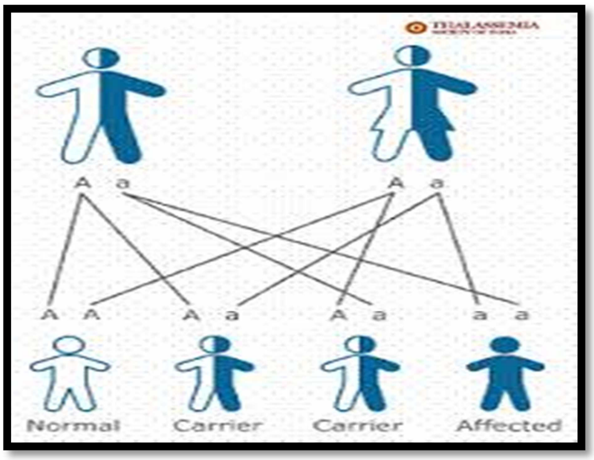

थैलेसीमिया की अनुवांशिकता

थैलेसीमिया से पीड़ित व्यक्ति में निम्न लक्षण हो सकते हैः–

1. **शारीरिक विकास में कमीः**– बच्चों में एनीमिया के कारण शारीरिक विकास काफी धीमा होता है। इस कारण से किशोरावस्था भी देरी से आती है।
2. **इन्फेक्शनः**–थैलेसीमिया रोगियों में अक्सर इन्फेक्शन का जोखिम बना रहता है।
3. **अस्थियों में विकारः**–थैलेसीमिया में बोन मेरो में फैलाव के कारण हड्डियों में भी इसका असर होता है। जिस कारण से हड्डियों में विशेषकर चेहरें एवं सिर के हड्डियों में असमान्य उभार आ जाते है। बोन मेरो में फैलाव के कारण हड्डियां पतली एवं शीघ्र टूटने वाली हो जाती है। जिसके कारण से हड्डियों मे फ्रैक्चर होते है।
4. **तिल्ली का बढ़ जानाः**–लाल रक्त कणों की कोशिकाएं टूटने से तिल्ली के उपर अधिक भार पडता है। जिसके कारण से इसमें आसमान्य रूप से वृद्वि होती है। बढी हुई तिल्ली से खून की कमी और अधिक हो जाती है। रक्ताधान करने पर लाल रक्त कोशिका भी टूटती है। अतः तिल्ली की अत्यधिक वृद्वि में इसे निकालना आवश्यक हो जाता है। थैलेसीमिया के रोगियों में लौह तत्व शरीर में जमा हो जाते है और बार–बार रक्त चढ़ाने पर अनावश्यक लौह तत्व जमा होते है। अधिक मात्रा में लौह तत्व जमा होने पर इसका दुष्प्रभाव ह्रदय, लीवर एवं एण्डोक्राइन ग्लैन्डस पर पडता है।

   अतः लौह तत्व के अधिक जमाव को रोकने के लिए चिलेशन थैरेपी आवश्यक हो जाती है।

<u>थैलेसीमिया का निदान</u>

<u>सस्ती/त्वरित प्रक्रियाएंः–</u>

1. **NESTROFT (Naked Eye Single tube Osmotic Fragility Test) :-** इस प्रक्रिया की 94 प्रतिशत संवेदनशीलता है तथा इसका परिणाम आयरन की कमी से प्रभावित हो सकता है।
2. हीमोग्लोबिन संबंधी सूचकांकः– **MCH, MCV** आटोमेटेड रेड संल काउंटर द्वारा।
3. हीमोग्लोबिन के घटको को निम्न पद्वतियों से पृथक करना– जिससे विभिन्न प्रकार के हीमोग्लोबिन मुख्यतः **HbA2, HbF** को पहचाना एवं परिमाणित किया जा सकेः–

- इलोक्ट्रोफोरेसिस– हाईवोल्टेज इलेक्ट्रोफोरेमिस
- आइसोइलेक्ट्रिक फोकसिंग
- **HPLC**
- मालिक्यूलर जांचें जैसे कि **DNA** विशलेषण।

इन जांचों के लिए निम्न एल्गोरिथम उपयोगी होगा, चूकिं सभी मरीजों में जांचों की आवश्यकता नही होती है

Parameters	**value**			
MCV (fl)	>78	>78	>78	<78
MCH (pg)	>27	>27	>27	<27
HbA_2	<3%	<1.8%	>3.5%	<3.5%
Result	Normal	δ- thalassemia	β thalassemia trait	a) Iron deficiency → Test or give iron and then test b) α- thalassemia → Need molecular studies c) silent β thalassemia d) δ+β thalassemia

If HbF >2% then it may be HPFH or δβ

Consider family/parental studies and/or molecular studies

उपचार

थैलेसीमिया के मरीजों के लिए निम्नलिखित उपचार उपलब्ध हैः–

1. मरीज में रक्त की अधिक कमी होने के कारण प्रत्येक 15 दिवस से 2 माह के भीतर रक्ताधान की आवश्यकता होती है।
2. लौह तत्व की अधिकता के लिए आयरन चिलेटर उपयोग में लाये जाते है।
3. कुछ मरीजों में तिल्ली को भी निकालने की आवश्यकता पड़ सकती है।
4. जिनमें संभव हो उनमें बोनमैरो ट्रान्सप्लान्टेशन किया जा सकता है। यह उपचार विकल्प अत्यधिक प्रभावशाली हैं, परन्तु यह एक खर्चीली प्रक्रिया है।

चूकिं थैलेसीमिया के मरीजों में नियमित रक्ताधान एक महत्वपूर्ण उपचार पद्वति है। अतः इन मरीजों में रक्ताधान से संबंधित महत्वपूर्ण बिन्दु इस प्रकार हैः–

(A) बीटा थैलेसीमिया मेजर, रक्ताधान आश्रित थैलेसीमिया मेजर

1. रक्ताधान कब शुरू करे ?

- हीमोग्लोबिन 7 ग्राम %, जिसे दो सप्ताह के अंतराल पर दो बार जांचा गया हो,
- या अप्रभावी रेड सेल का उत्पादन होने के संकेत मिल रहे हो, जैसे किः–
  (i) हड्डियों में विकार उत्पन्न होना। (माथे की हड्डियों में उभार आना)
  (ii) मंद शारीरिक विकास।
  (iii) शरीर में गठाने उभरना।

ट्रान्सफ्यूजन की आवृत्ति इस तरह से नियंत्रित हो कि हीमोग्लोबिन स्तर 9 ग्राम % से अधिक रहें।

उपरोक्त क्रिया का उद्देश्य बोन मैरो की अत्यधिक क्रियाशीलता को नियंत्रित करने के लिए है। जिससे हड्डियों पर दबाव कम होगा, उनका विकास होगा एवं शारीरिक क्रियाशीलता बनी रहेगी।

ट्रान्सफ्यूजन के उपरान्त हीमोग्लोबिन स्तर 12 ग्राम % से अधिक नही होना चाहिए।

2 किस गुणवत्ता का रक्त होना चाहिए ?

I. दान किया हुआ रक्त स्वैच्छिक रक्त दाता का होना चाहिए जो कि रक्तदान के लिए स्वीकृत मापदण्डों को पूर्ण करता हो।
II. वे संस्थायें जो कि रक्त एवं रक्त उत्पादो के पृथककरण एवं रख–रखाव के लिए राष्ट्रीय मापदण्डों का पालन करती हो।

III. रक्त की जांच एच.आई.व्ही, हीपेटाइटिस–बी एवं सी, सिफीलीस, मलेरिया या अन्य संक्रामक कारको के लिए अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए।

IV. वे मरीज जिनमें ट्रान्सफ्यूजन किया जाना है उन्हें ABO तथा Rh काम्पेटिबल रक्त देना है।

V. प्रत्येक ट्रान्सफ्यूजन के पूर्व रक्त की पूर्ण क्रांसमेचिंग की जानी चाहिए एवं किसी भी नई एन्टीबॉडी के लिए भी जांच की जानी चाहिए।

VI. फर्स्ट डिग्री रिलेटिव्स से ट्रान्सफ्यूजन के लिए रक्त नही लिया जाए क्योंकि इससे उत्पन्न होने वाले एन्टीबॉडीस से बोनमैरो ट्रान्सप्लान्टेशन के परिणाम प्रभावित होते है।

VII. रक्त में से श्वेत रक्त कणिकाओं को पृथक (ल्यूकोफिल्ट्रेशन) कर लेना चाहिए। श्वेत रक्त कणिकाओं को पृथक करने की प्रकिया यथासंभव भंडारण पूर्व की जानी चाहिए, परन्तु इस प्रकिया को ब्लड बैकों में या बेड साइड (Bed side) पर करना भी मान्य है। इसके लिए ल्यूकोसाइट फिल्टर का उपयोग किया जाता है।

VIII. वाशड (Washed) लाल रक्त कण उन मरीजों में उपयोगी है जो कि प्लाज्मा प्रोटींस के लिए गंभीर रूप से एलर्जिक है।

IX. प्रत्येक ट्रान्सफ्यूजन का रिकार्ड सावधानी पूर्वक रखा जाना चाहिए। जिसमें की रक्त की मात्रा व ट्रान्सफ्यूजन से उत्पन्न दुष्प्रभाव, वार्षिक रक्त की आवश्यकता इत्यादि की जानकारी सम्मिलित हो।

X. एन्टीजन जैसे कि C.E और Kell का भी मिलान आवश्यक है।

(B) रक्ताधान गैर आश्रित थैलेसीमिया या थैलेसीमिया माइनर

इस चिकित्सकीय परिस्थिति में रक्ताधान की आवश्यकता कभी–कभी ही रहती है– जैसे कि हीमोग्लोबिन में अचानक गिरावट आना जो कि रक्तस्त्राव, सर्जरी या किसी संक्रमण की वजह से संभव हो सकता है। गर्भावस्था के दौरान भी ट्रान्सफ्यूजन की आवश्यकता पड़ सकती है।
नियमित ट्रान्सफ्यूजन की निम्न परिस्थितियों में अनुशंसा की जाती हैः–

(i) शरीर का अल्प विकास होना मुख्यतः लम्बाई का धीमा विकास

(ii) भारी कार्य करने में अक्षमता

(iii) स्प्लीन की अत्यधिक गतिविधि जिससे की हीमोग्लोबिन की मात्रा कम हो जाती है एवं गंभीर अवस्था में प्लेटिलेट व श्वेत रक्त कण भी कम होने लगते है।

(iv) हड्डियों में उल्लेखनीय विकृतियां उत्पन्न होना।

(v) बार–बार लाल रक्त कणों के टूटने से संकट उत्पन्न होना (मुख्यतः HbH बिमारी)

(vi) पल्मोनरी उच्च रक्तचाप।

(vii) उच्च जोखिम (High risk) मामलों की रोकथाम तथा थ्रोम्बोटिक या सेरेब्रोवेस्कुलर बिमारी का इलाज।

(viii) एक्ट्रामेडुलरी मासेस (Extra Medullay Masses)

(ix) पैरो पर अल्सर

रक्ताधान से जुड़े जोखिम

(i) उपरोक्त स्थितियों में शरीर में लौह तत्वों का अधिभार (Overload) ट्रान्सफ्यूजन प्रारम्भ करने के पूर्व भी हो सकता है। परन्तु ट्रान्सफ्यूजन से लौह तत्व का अधिभार प्रभावशाली तरीके से बढ़ सकता है। अतः ऐसे मरीजों की प्रत्येक 3 माह से 6 माह में नियमित रूप से मॉनिट्रिंग की जानी चाहिए, तथा लौह तत्व को शरीर से निकालने की प्रक्रिया (IV या oral Chelation) उसके अधिभार की मात्रा के अनुसार शुरू कर देनी चाहिए। इन रोगियों का प्रत्येक 3 से 6 माह में लीवर तथा किडनी फंक्शन टेस्ट भी होना चाहिए।

(ii) ऐसे मरीजों के शरीर में विभिन्न प्रकार की एंटीबॉडिज बनने का खतरा रहता है, गर्भवती महिलाओं व स्पलीन रहित मरीजों में खतरा और भी बढ़ जाता है। अतः रक्त के एंटीजन का विस्तारपूर्वक मैचिंग किया जाना अत्यन्त आवश्यक है।

थैलेसीमिया में लौह तत्व के अधिभार की मॉनिट्रिंग तथा लौह तत्व को निष्क्रीय करने की प्रक्रिया

लौह तत्व अधिभार की मॉनिट्रिंग

सीरम फिरेटिनः– यह जांच प्रत्येक 2 से 3 माह मे की जानी चाहिए। यह पाया गया कि स्पॉट फेरेटिन लेवल लौह तत्व के भार की मात्रा का सही आंकलन नही कर पाता है। अतः यह आवश्यक है कि ट्रान्सफेरीन सेचुरेशन जांच भी की जाना चाहिए।

लीवर आयरन सांद्रताः– (LIC) लीवर में लौह तत्व का आंकलन एम.आर.आई के माध्यम से किया जा सकता है परन्तु यह जांच आसानी से उपलब्ध नही होती है। यदि यह जांच उपलब्ध है तो प्रति 2 वर्ष में यह जांच की जानी चाहिए।

कॉरडियेक आयरनः–एम.आर.आई–T2 के माध्यम से ह्रदय में लौह तत्व का आंकलन किया जा सकता है। यह भी एक मंहगी जांच है। हालांकि अधिक उम्र के मरीजों के लिए यह एक उपयोगी जांच है।

(A) रक्ताधान आश्रित थैलेसीमिया में लौह तत्व चीलेशनः–

आयरन चिलेशन का उद्देश्य अधिक मात्रा में लौह तत्व को शरीर से निष्क्रीय करना है ताकि लौह तत्व के घातक घटकों का निर्माण ना हो। इससे शरीर के अंगों मुख्यतः–ह्रदय, लीवर तथा ग्रंथियों का बचाव संभव होगा। वर्तमान समय में तीन आयरन चिलेटिंग औषधियां मान्य की गई है।

- Desferioxamine
- Deferiprone

- Deferasirox

इन औषधियों को निर्माण करने के लिए भारत में बहुतायात में निर्माता है, इन ब्रान्डस की गुणवत्ता एवं प्रभावशीलता की जांच अत्यन्त आवश्यक है।

Desferioxamine:- यह औषधि सबक्युटेनियस (S.C) या इन्ट्राविनस (I.V) माध्यम से 8 से 12 घंटे के लिए दी जाती हैं। जहां पर अधिक प्रभावशाली ढ़ग से लौह तत्व को निष्क्रीय करने की अवश्यकता होती है वहां 24 घंटे के लिए इन्ट्राविनस (I.V) उपचार किया जाता है।

डोज–20–40 मिली.ग्राम बच्चों के लिए एवं 40 से 60 मिली.ग्राम वयस्को के लिए।

बच्चो में इस औषधि का उपयोग 10 से 20 बार ट्रान्सफ्यूजन करने के उपरान्त किया जाता है या जब फिरेटिन लेवल 1000 µgm/ltr से अधिक हो जायें। विटाामिन –सी Desferioxamine की लौह तत्व के निष्क्रीय करने की क्षमता को बढ़ाता है, विटामिन–सी का डोज 2 से 3 मिली.ग्राम/कि.ग्रा./दिन से अधिक नही होना चाहिए, क्योंकि अधिक मात्रा में विटामिन–सी लौह के हानिकारक प्रभाव को बढ़ा देता है।

Deferiprone:- यह औषधि 6 वर्ष से अधिक उम्र के बच्चों के लिए मान्य है। यह टेबलेट के रूप में उपलब्ध है।

डोज 75–100 मिली.ग्राम/कि.ग्रा./दिन तीन भागों में विभाजित कर के दी जाती है। इस औषधि का सबसे घातक दुष्प्रभाव श्वेतरक्त कणिका पर होता है, जैसे कि संख्या में गिरावट आना, जो कि कभी–कभी एग्रेन्यूलोसाइटोसीस (Agranulocytosis) के स्तर तक पहुंच सकती है जिसकी वजह से गंभीर संक्रामक रोग संभव हो सकती है। इस वजह से श्वेत रक्त कणिकाओं की गणना प्रत्येंक एक से दो सप्ताह में की जानी चाहिए तथा इसकी संख्या कम होने पर इस औषधि को बंद कर देना चाहिए।

अन्य दु ष्प्रभाव जैसे कि ह्रड्डी के जोड़ों में दर्द होना। लीवर, किडनी फंक्शन टेस्ट प्रत्येक माह में किये जाने चाहिए।

Deferiprone & Deferasiorox:- एक साथ उपयोग करने पर अधिक प्रभावशाली ढ़ग से चिलेशन कराती है।

Deferasirox:- यह औषधि 2 साल से अधिक उम्र के बच्चों के लिए मान्य है। यह भी Deferiprone की तरह टेबलेट के रूप में उपलब्ध है।

प्रारम्भिक डोज– बच्चों में 20 मिली.ग्राम/कि.ग्रा./दिन (जिसे 40 मिली.ग्राम/कि.ग्रा./दिन तक बढ़ाया जा सकता है)। इस औषधि का दुष्प्रभाव गुर्दे व लीवर पर पड़ सकता है, यह दुष्प्रभाव ज्यादा घातक नही होते है। परन्तु यह औषधि गुर्दे या लीवर की खराबी की अवस्था में कदाचित भी इस्तेमाल नही की जानी चाहिए।

गुर्दे व लीवर के क्रियाशीलता की जांच प्रत्येक माह आवश्यक है।

(B) रक्ताधान गैर आश्रित थैलेसीमिया (NTDT) के मरीजों में लौह तत्व चीलेशनः–

इस उद्देश्य के लिए दो औषधियों को मान्य किया गया हैः–

Desferioxamine & Deferasiorox:- जब सीरम फिरेटिन 800 µgm/ltr से अधिक हो जाए तब लौह तत्व को निष्क्रीय करने की प्रक्रिया शुरू कर देनी चाहिए।

प्रारम्भिक डोज 10 मिली.ग्राम/कि.ग्रा./दिन है जो कि 20 मिली.ग्राम/कि.ग्रा./दिन तक बढ़ायी जा सकती हैं, यदि फिरेटिन लेवल 1500–2000 µgm/ltr या अधिक हो।

भोजन के साथ चाय पीने से लौह अवशोषण कम होता है।

<u>बचाव एवं सावधानियां</u>

1. जिन जन समूहों में थैलेसीमिया के होने की संम्भावना अधिक है उनमें थैलेसीमिया ट्रेट का पता लगाने के लिए HbA_2 एवं अन्य स्क्रीनिंग जाचें महिला एवं पुरूष दोनो में करानी चाहिए।
2. स्क्रीनिंग प्रकिया से जिन व्यक्तियों या दंपत्तियों में थैलेसीमिया के लिए वाहक होने का संकेत मिला है उनके लिए जेनेटिक परामर्श अत्यन्त आवश्यक है।
3. प्रसव पूर्व क्लीनिक में थैलेसीमिया के लिए वाहक महिलाओं को अपने पति की भी जांच कराने का सुझाव देना चाहिए। एट रिस्क दम्पत्तियों को परार्मश देने वाला व्यक्ति एक प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मी होना चाहिए, जो कि परार्मश देने में सक्षम हो तथा उसे हीमोग्लोबिन विकारों की गहन जानकारी है। ऐसे स्वास्थ्य कर्मी को निम्न कार्य करने चाहिएः–
   - स्क्रीनिंग के परिणामों की व्याख्या करनी चाहिए तथा विभिन्न प्रकार के हीमोग्लोबिन की मौजूदगी की क्या चिकित्सकीय महत्ता है, उस पर भी चर्चा की जानी चाहिए।
   - परामर्शदाता को सुनिश्चित करना चाहिए कि एट रिस्क दम्पत्ती हीमोग्लोबिन विकारों के दुष्प्रभावों को भली–भांति समझ गए है। उदाहरण के तौर पर यदि बिमारी की संभावना 25 प्रतिशत है तो यह नही समझा जाना चाहिए कि अगर एक संतान प्रभावित हो गई है तो बाकी तीन संताने प्रभावित नही होगी।
   - परामर्शदाता को रोकथाम संबंधी विकल्पों तथा इन विकल्पों के लाभ एवं हानि को भी समझाना चाहिए।
   - परामर्शदाता को सूचनाप्रद होना चाहिए परन्तु दंपंत्तियों को विकल्प का चुनाव करने की स्वायत्ता होनी चाहिए।
   - परामर्शदाता को दम्पत्तियों द्वारा चयनित विकल्प के प्रति सहायक होना चाहिए।
   - दम्पत्तियों को परार्मश के लिए दूसरी बार भी बुलाना चाहिए चूकिं पहली बार के परार्मश से लिए गए निर्णय चिंता तथा भावना से प्रभावित हो सकते है।

<u>**हीमोग्लोबिन संबंधी विकारों के रोकथाम कार्यक्रमों के लिए संक्षिप्त दिशा–निर्देशः–**</u>

(A) हीमोग्लोबिन संबंधी विकारों के रोकथाम कार्यक्रम के महत्वपूर्ण तथ्यः–

a. जन जागरूकता

b. स्क्रीनिंग की उपलब्धता

c. हीमोग्लोबिन विकारों के वाहकों के लिए जिनेटिक परामर्श की उपलब्धता।

(B) जन जागरूकता अभियान एवं स्वास्थ्य शिक्षा का उद्‌देश्यः–

a. थैलेसीमिया एवं सिकल सेल एनिमिया जैसी बिमारियों तथा इन बिमारियों के दुष्परिणामों की जानकारी दी जानी चाहिए।

b. इन बिमारियों के इलाज उपलब्ध होने की जानकारी भी आम जनता को होनी चाहिए।

c. लोगों को इन बिमारियों की रोकथाम की जानकारी होनी चाहिए, जिसके लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि वाहकों की पहचान की जाए एवं उन्हें जिनेटिक परार्मश दिया जाए।

d. हीमोग्लोबिन विकारों के वाहक एवं दंपत्तियों को उनके होने वाली संतानों में इन बिमारियों के होने की संभावना की जानकारी होनी चाहिए।

e. आम जनता को जागरूक करना चाहिए कि इन बिमारियों के लिए वाहक होना कोई कलंक नही है।

हीमोफिलिया

हीमोफीलियाः–प्रभावित जनसंख्या में 5–10 हजार में से 1 बच्चे को हीमोफीलिया की संभावना है। हीमोफीलिया में आंतरिक तथा बाह्य रक्त स्त्राव के कारण मांसपेशियां तथा शरीर के जोड़ सबसे अधिक प्रभावित होते है। कभी–कभी मस्तिष्क में रक्त स्त्राव होने से ब्रेन डेमेज तथा मृत्यु भी हो जाती है। पूर्व मे प्रभावित बच्चों का औसत जीवन 11 वर्ष होता था जोकि उचित उपचार से अब 50–60 वर्ष तक हो सकता है।

हीमोफिलिया क्या है?

- हीमोफिलिया एक प्रकार का रक्त विकार है। हीमोफिलिया से ग्रसित लोगों में चोट इत्यादि लगने के पश्चात लंबे समय तक रक्त स्राव होता है। ऐसे मरीजों के रक्त मे क्लॉटिंग फैक्टर्स की कमी होती है। क्लॉटिंग फैक्टर एक प्रोटीन होता है जो कि रक्त स्राव को नियंत्रित करता है।
- हीमोफिलिया एक दुर्लभ बिमारी है, 10,000 में से एक व्यक्ति इस रोग से प्रभावित होता है।
- हीमोफिलिया के सबसे प्रमुख प्रकार को **"हीमोफिलिया A"** कहा जाता है, इसमें व्यक्ति में क्लाटिंग फेक्टर VIII पर्याप्त मात्रा में नही होता है।
- हीमोफिलिया का एक अन्य प्रकार भी होता है जिसे **"हीमोफिलिया B"** कहा जाता है, जिसमें फेक्टर IX की कमी हो जाती है।
- हीमोफिलिया A व हीमोफिलिया B के परिणाम समान है अर्थात इन व्यक्तियों में सामान्य से अधिक समय तक रक्त स्त्राव होता है।

हीमोफिलिया कैसे होता है?

- हीमोफिलिया एक जन्मजात रोग है, यह किसी प्रकार की छुआछूत की बीमारी नही है।
- हीमोफिलिया सामान्यतः वंशानुगत बीमारी है, जो कि माता पिता के जीन द्वारा संचारित होती है। जी़न शारीरिक विकास एवं विशिष्टता के लिए संदेश वाहक होते है।
- कभी कभार हीमोफिलिया बिना किसी पारिवारिक पृष्ठभूमि के भी हो सकता है, इसे Sproadic हीमोफिलिया कहते है। लगभग 30 प्रतिशत मामलों में हीमोफिलिया माता–पिता के जी़न से न होकर व्यक्ति के स्वयं के जी़न में बदलाव होने की वजह से होता हैं।

हीमोफिलिया किस प्रकार से वंशानुगत होता है?

- यदि पिता को हीमोफिलिया है, परंतु माता को नही ऐसी स्थिति में कोई भी पुत्र हीमोफिलिया से ग्रसित नही होगा, परंतु समस्त पुत्रियां हीमोफिलिया जी़न के लिए वाहक होगी।

- यदि माता हीमोफिलिया ज़ीन के लिए वाहक है, तो 50 प्रतिशत पुत्रों में हीमोफिलिया होने की संभावना होगी तथा 50 प्रतिशत पुत्रियों का हीमोफिलिया ज़ीन के वाहक होने की संभावना होगी।
- स्त्रियों में हीमोफिलिया तभी संम्भव है जब पिता को हीमोफिलिया हो तथा माता हीमोफिलिया ज़ीन की वाहक हो, जो कि असामान्य है।

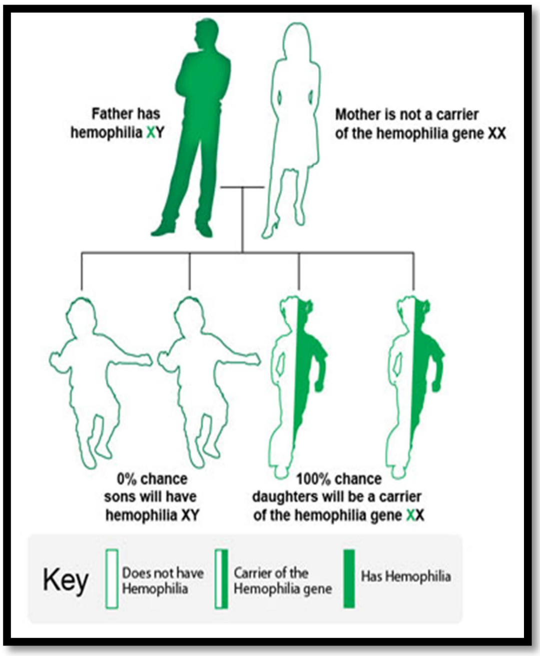

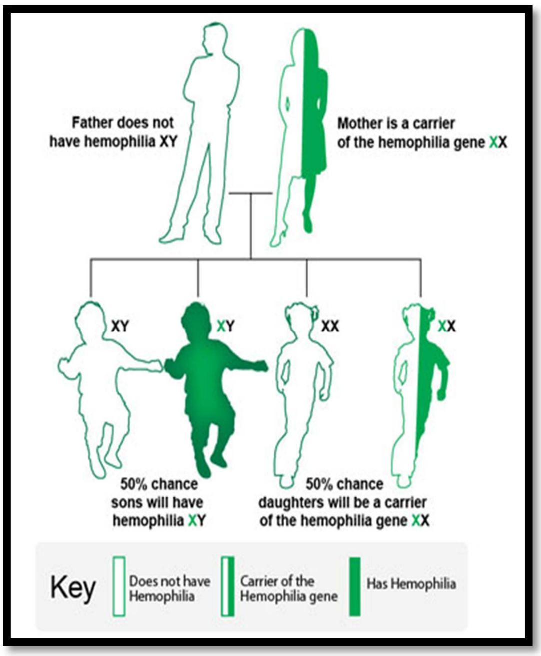

हीमोफिलिया की तीव्रता के तीन स्तर है:–

हीमोफिलिया की तीव्रता व्यक्ति के रक्त में क्लाटिंग फेक्टर की मात्रा में कमी पर निर्भर करती है।

सामान्य– फेक्टर VIII या फेक्टर IX की 50 – 150 प्रतिशत कियाशीलता।

माईल्ड हीमोफिलिया (फेक्टर की 5–30 प्रतिशत कियाशीलता)–

- शल्य चिकित्सा या गंभीर चोट के पश्चात लम्बे समय तक रक्त स्त्राव होना।
- रक्त स्त्राव की समस्या नही भी हो सकती है।

मॉडरेट हीमोफिलिया (फेक्टर की 1–5 प्रतिशत कियाशीलता)–

- शल्य चिकित्सा, गंभीर चोट या दंत शल्य प्रक्रिया के पश्चात लम्बे समय तक रक्त स्त्राव होना।
- माह में एक बार रक्त स्त्राव की घटना होना।
- कभी कभार अस्पष्ट कारणों से रक्त स्त्राव होना।

सीवियर हीमोफिलिया (क्लाटिंग फेक्टर की 1 प्रतिशत से कम कियाशीलता)–

- मांसपेशियों व जोड़ों (घुटने, कोहनी, ऐड़ी) में रक्त स्त्राव होना।
- अस्पष्ट कारणों से सप्ताह में 1 या दो बार रक्त स्त्राव की घटना होना।

हीमोफिलिया के लक्षण क्या है?

हीमोफिलिया A तथा B के समान लक्षण होते हैः–

- बड़े–बड़े चोट के निशान बन जाना।
- मांसपेशियों एवं जोड़ों (मुख्यतः घुटने, कोहनी तथा ऐड़ी) में रक्तस्त्राव होना।
- अस्पष्ट कारणों से शरीर के अंदर अचानक स्वतः रक्तस्त्राव होना।
- शल्य चिकित्सा, चोट इत्यादि के पश्चात सामान्य की तुलना में अधिक समय तक रक्त स्त्राव होना।

जोड़ों एवं मांसपेशियों में रक्तस्त्राव के लक्षणः–

- जोड़ों में दर्द या अजीब सा एहसास होना।
- सूजन आ जाना।
- जोड़ों में अकड़न।
- चलने फिरने में समस्या।

सामान्यतः रक्तस्त्राव कहां होता है ?

- हीमोफिलिया से ग्रसित व्यक्ति में रक्तस्त्राव शरीर के अंदर या बाहर दोनों जगह हो सकता है।
- एक ही जोड़ में बार–बार रक्तस्त्राव होने से जोड़ क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। इसके अलावा अन्य समस्याओं जैसे कि आथ्राइटिस हो जाती है जिससे चलने फिरने व सामान्य क्रियाकलापों करने मे कठिनाई होती है। हालांकि अन्य आथ्राइटिस के प्रकारों की तुलना में हीमोफिलिया सामान्यतः हाथ के जोड़ों को प्रभावित नही करता है।

हीमोफिलिया का उपचार–

- वर्तमान में हीमाफिलिया का इलाज अत्यंत प्रभावाशाली है। अल्पमात्रा में मौजूद क्लाटिंग फेक्टर को रक्त प्रवाह में इंजेक्ट किया जाता है। पर्याप्त मात्रा में क्लाटिंग फेक्टर रक्तस्त्राव को रोक देता है।

रक्तस्त्राव का त्वरित इलाज–

त्वरित इलाज से जोड़ो, मांसपेशियों एवं अन्य अंगों को क्षतिग्रस्त होने से बचाया जा सकता है। रक्त स्त्राव तुरंत रोकने से रक्त के घटकों की आवश्यकता भी कम रहेगी।

संदेह होने पर भी इलाज–

असमंजस की अवस्था में भी इलाज शुरू कर देना चाहिए, जोड़ों के सूजने या किसी अन्य प्रकार के लक्षण आने का प्रतिक्षा नही करना चाहिए। हांलाकि हीमोफिलिया से ग्रसित व्यक्ति को रोगमुक्त नही किया जा सकता परंतु उपयुक्त इलाज से उन्हे सामान्य स्वस्थ जीवन दिया जा सकता है। उपचार के अभाव में हीमोफिलिया से ग्रसित व्यक्तियों के लिए सामान्य क्रियाकलाप अत्यंत कठिन होते हैं, वे शारिरिक रूप से अक्षम हो सकते है या अल्प आयु में मृत्यु भी हो सकती है।

उपचार कब करना चाहिए?

उपचार निम्न अवस्थाओं में शुरू कर देना चाहिए

- जोड़ों में रक्त स्त्राव।
- मांसपेशियों मुख्यतः भुजा या पैर में रक्त स्त्राव।
- गला, मुख जुबान, चेहरे या नेत्रों में चोट लगना।
- सिर में गंभीर चोट लगना या असाधारण रूप से सिर में दर्द होना।
- शरीर के किसी भी भाग से भारी व लगातार रक्त स्त्राव होना।
- गंभीर दर्द या सूजन आ जाना।
- सभी खुले हुए घाव जिनमें टांके लगाने की आवश्यकता है तथा किसी भी प्रकार की दुर्घटना जिसमें रक्तस्त्राव होने की संभावना है।

निम्न परिस्थितियों में पूर्व उपचार आवश्यक है।

1. शल्य चिकित्सा जिसमें दंत शल्य चिकित्सा भी शामिल है।
2. वे क्रियाकलाप जिनमें रक्त स्त्राव की संभावना हो सकती है।

उपचार संभवतः कब आवश्यक नही है?

- हीमोफिलिया से ग्रसित बच्चों में छोटे घाव के निशान आम बात है, परंतु ये सामान्यतः घातक नही होते हैं। हालांकि सिर पर चोट के निशान घातक हो सकते है तथा चिकित्सकीय परामर्श वांछित है।
- छोटी चोटों व खरोचों से रक्त स्त्राव सामान्य व्यक्ति के समान ही होगा अतः सामान्यतः ये घातक नही होती है।

हीमोफिलिया से ग्रसित व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण दिशा निर्देश–

- रक्त स्त्राव का त्वरित उपचार।
- स्वस्थ रहे।
- एस्प्रीन जैसी औषधियों का प्रयोग न करें।
- हीमोफिलिया के उपचार में सक्षम चिकित्सक एवं नर्स से परामर्श लें।
- मांसपेशियों में सुई ना लगायें।
- दांतों का ख्याल रखें।
- मूलभूत प्राथमिक उपचार की जानकारी रखें।

1. **फीटल हीमोग्लोबिन (एफ) की जांचः–** हीमोग्लेबिन एफ को कई विधियों से नापा जा सकता है, अधिकतर विधियां इसके एल्कली रेजिस्टेंट होने पर आधारित हैं।

हीमोग्लोबिनोंपैथीज़ जैसे सिकिल सेल एनीमिया एवं थैलेसीमिया इत्यादि के डायग्नोसिस के लिए रक्त में हीमोग्लोबिन एफ की उपस्थिति एवं मात्रा की जांच आवश्यक एवं महत्वपूर्ण होती है। इसके लिए रूटीन में एल्कली डिनेचुरेशन विधि से जांच की जाती है।

रिएजेन्टसः– 1 सोडियम हायड्रोक्साइड (NaOH) 0.083N (N/12) ताजा बना कर उपयोग किया जाता है।

2. संतृप्त एमोनियम सल्फेट 500 एम.एल. में 2 एम.एल. कन्संट्रेटेड एच.सी.एल. मिलाकर बनाया जाता है।
3. क्लोरोफार्म (हीमोलायसेट बनाने के लिये)।

हीमोलायसेट बनाने की विधिः– एन्टी कोएगुलेंट जैसे इ.डी.टी.ए. के साथ लिए गये रक्त को सेंट्रिफ्यूज करके रेड पैंक सेल्स को नार्मल सेलाइन (सोडियम क्लोराइड 0.9%) से तीन बार वाश करने के पश्चात एक वाल्यूम रक्त एक वाल्यूम डिस्टिल्ड वाटर एवं 0.5 एम.एल क्लोरोफार्म मिलाकर दो मिनट शेक करने के पश्चात 3000 आर.पी.एम. पर 20 मिनट के लिए सेन्ट्रीफ्यूज किया जाता है। इसके बाद ऊपर की हीमोग्लोबन की लेयर निकाल ली जाती है, इसको हीमोलायसेट कहते हैं। इसके पश्चात इसका हीमोग्लोविन नाप कर इसे 10% पर एडजस्ट करते हैं। इसको फ्रीज करके स्टोर किया जा सकता है।

हीमोग्लोबिन एफ के परिक्षण व नापने की विधिः– 3.2 एम.एल. 0.083 N या N/12 सोडियम हायड्रोक्साइड (NaOH) टेस्ट ट्यूब में लेकर इसमें 0.2 एम.एल. हीमोलायसेट मिलाया जाता है एवं स्टॉप वाच शुरू की जाती है, एक मिनट पश्चात 6.8 एम.एल. प्रेसिपिटेटिंग रीएजेन्ट (संतृप्त अमोनियम सल्फेट) मिलाया जाता है व हिलाकर एक मिनट पश्चात वाटमेन न. 1 फिल्टर पेपर से फिल्टर किया जाता है। अगर फिल्ट्रेट कलर लैस होता है, तो हीमोग्लोबिन नार्मल व्यस्क है या इसमें फीटल हीमोग्लोबिन नही है। अगर फिल्ट्रेट लाल या भूरा है तो इसमें हीमोग्लोबिन एफ (फीटल) हैं।

इसके पश्चात फिल्ट्रेट में हीमोग्लोबिन एफ की मात्रा (प्रतिशत) निकाली जाती है, जिसके लिए 10 एम.एल. 0.04 % अमोनियम साल्यूशन (या D.W.) में 10 माइक्रोलीटर (0.01 एम.एल.) मिलाकर स्टेंडर्ड बनाते हैं। इसके पश्चात स्टेडर्ड व टेस्ट (फिल्ट्रेट) की रीडिंग वाटर ब्लेंक के अगेन्सट 540 एन.एम. वेव लैंथ पर लेते हैं।

केलकुलेशनः– % हीमोग्लोबिन एफ = टेस्ट की रीडिंग /स्टेंडर्ड की रीडिंग X 5 (या एल्कली रेजिस्टेंट हीमोग्लोबिन)

नार्मल व्यस्क ब्लड में हीमोग्लोबिन एफ 0.5 से 1.7 प्रतिशत तक आ सकता है। जबकि विभिन्न विकारों के अनुसार 70 से 80 प्रतिशत तक फीटल हीमोग्लोबिन आता है। सिकल सेल ट्रेट मे नार्मल व्यक्ति की तरह फीटल हीमोग्लोबिन होता है। सिकल सेल एनिमिया में यह 2.0 प्रतिशत से 24 प्रतिशत तक हो सकता है।

2. <u>सिकलिंग टेस्टः–</u>

1. 2 प्रतिशत सोडियम मेटाबाय सल्फाइड डिस्टिल्ट वाटर में फ्रेशली बनाया हुआ।

2. ब्लड सेम्पल ई.डी.टी.ए. या आक्सलेटेड में लिया हुआ। 20 माइक्रो लीटर ब्लड सेम्पल व स्लाइड पर 20–40 माइक्रो लीटर 2 प्रतिशत सोडियम मेटाबाई सल्फाइड रीएजेन्ट मिलायें इसके बाद इसको कवर स्लिप से कवर करने के पश्चात उसके किनारे पर अधिक मात्रा में आए साल्यूशन को फिल्टर पेपर से सोखने के पश्चात डी.पी.एक्स. या पेट्रोलियम जेली से किनारे सील करें।

हाई पावर आब्जेक्टिव में माइक्रोस्कोप में 15, 30, 60 मिनट पश्चात देखें 2 घण्टे के अन्तराल पर भी देखें।

सिकलिंग हसिया या केले के आकार की रेड सेल्स 15 मिनट से 60 मिनट में दिखती हैं। सिकिल सेल ट्रेट में यह अधिक समय ले सकती है। (18 घण्टे)

3. <u>नेस्ट्राफ टेस्टः–</u> Necked eye single tube red cell Osmotic Fragility test

यह टेस्ट हीमोग्लोबिन संबंधित विकारों की प्रारम्भिक स्क्रीनिंग जांच करने हेतु होता है।

प्रमुख तौर से बी β (बीटा) थेलेसिमीया मानर या ट्रेट के लिये इसका उपयोग किया जाता है। यह अत्यधिक संवेदनशील, सस्ती एवं कम समय में होने वाली जाँच है।

<u>सेम्पल –</u> ई.डी.टी.ए. वायल में ब्लड लें।

<u>रिएजेन्ट–</u> (a) सोडियम क्लोराइड

(b) डायसोडियम फास्फेट

(c) सोडियम हायड्रोजन फास्फेट

सर्वप्रथम 5 एम.एल. 0.35 प्रतिशत सेलाइन साल्युशन दो टेस्ट ट्यूब में लिया जाता है।

कन्ट्रोल ट्यूब में 0.02 एम.एल., ब्लड नार्मल व्यक्ति का मिलाते हैं। (2.5 एम.एल. (Distilled Water),में 20 माइक्रोलीटर, ब्लड)

दूसरी टेस्ट ट्यूब में 0.02 एम.एल. रक्त मरीज का मिलाते हैं। दोनों ट्यूबस को मिक्स करते हैं व आधे घण्टे रखने के पश्चात इन ट्यूबों के पीछे व्हाइट पेपर गहरी काली लाईन के साथ रखते हैं।

कंट्रोल ट्यूब में काली लाईन साफ दिखाई देती है, किन्तु टेस्ट केस में लाइन साफ नही दिखती।

थेलेसिमिया ट्रेट में ब्लैक लाइन साफ नही दिखती क्योंकि माइक्रोसिटिक हायपोक्रमिक सेल्स लायसिस के लिए रेजिस्टेंट होती है। (यह सेंट्रिफ्यूज करने पर नीचे देखी भी जा सकती है।)

नार्मल नार्मोसिटिक सेल्स लायसिस के लिए रेजिस्टेट नही होती इस कारण पूरी तरह से लाइज हो जाती है।

यह टेस्ट थेलेसिमिया स्क्रीनिंग के लिए उपयोगी है। इसके आधार पर जब यह पॉजिटिव होता है। (मरीज जिनका MCV<70f1; MCH<23 NESTROFT test positive होता है) तो इन केसेस में HbA2 एस्टिमेशन किया जाता है। थेलेसिमिया ट्रेट को और कनफर्म करने के लिए NESTROFT टेस्ट आयरन डेफीशियेन्सी एनीमिया व कुछ अन्य हीमोग्लोबिन विकारों में पॉजिटिव आ सकता है।

HbA2 एस्टिमेशन 3.6 से 8 प्रतिशत तक होने पर थेलेसिमिया ट्रेट के लिए डायग्नास्टिक है, पर साथ में आयरन डेफिशन्सी होने पर यह 3.6 से कम आ सकता है।

<u>हीमोग्लोबिन इलेक्ट्रोफोरेसिसः–</u>

हीमोग्लोबिन इलेक्ट्रोफोरसिस हीमोग्लोबिनोपेथीज को डायग्नोज करने के लिए महत्वपूर्ण जांच है। सामान्यतया इलेक्ट्रोफोरेसिस हेतु एल्केलाईन (Ph 8.4) बफर मीडियम अधिक उपयोगी होता है

एल्केलाइन (8.4) पी.एच. पर इलेक्ट्रोफोरेसिस सालिड मीडियम के इस्तेमाल के आधार पर कई प्रकार का हो सकता है, जैसे

1. सेलूलोज एसिटेट
2. स्टार्च अगार जेल
3. एगेरोज जेल
4. अगार जेल

अगार जेल एवं एल्केलाइन मीडियम (8.4 पी.एच.) के द्वारा एबनार्मल हीमोग्लोबिन को अलग करने और पहचानने की बहुत कारगर विधि है।

उपकरण व रीएजेन्टसः–

1. इलेक्ट्रोफोरेटिक टेंक (होरीजेन्टल) व पावर सप्लाई
2. फिल्टर पेपर।
3. एपलिकेटर– कवर स्लिप काटकर तैयार किया गया।
4. एगार जेल प्लेट बनाने के लिऐ माइक्रोस्कोप ग्लास स्लाइड व अगार जेल
5. स्टेनिंग का सामान व ओवन
6. वेईंग बेलेन्स व पी.एच. मीटर
7. इलेक्ट्रोफोटिक बफर– ट्रिस बफर– (हायड्रो आक्सी मीथाइल)– एमाइनो मीथेन– 10.2 ग्राम, इथाईलीन डायएमीन टेट्रा एसिटिक एसिड (ई.डी.टी.ए.) 0.6 ग्राम बोरिक एसिड 3.2 ग्राम– 1 लीटर डिस्टिल वाटर में बनाया हुआ बफर 4^0C पर स्टोर किया जा सकता है और खराब हुए बिना कई बार इस्तेमाल किया जा सकता है।
8. एमाईडो ब्लैक स्टेन (1 प्रतिशत मीथेनाल में बना हुआ)
9. डी स्टेनिंग (या काउन्टर स्टेनिग) सोलूशन 5 प्रतिशत एसिटिक एसिड।
10. मीथेनाल
11. 2 प्रतिशत एसिटिक एसिड सोल्यूशन स्लाइड को और रिन्स करने के लिए।

<u>अगार जेल प्लेट बनानाः–</u>

एक ग्राम अगार पावडर 100 एम.एल. ट्रिस बफर में मिलाकर बायलिंग वाटर बाथ में 10 से 15 मिनट गर्म करके पिघलाते हैं व इसके पश्चात ग्लास स्लाइड को समतल सतह पर रखकर पिपेट से हर स्लाइड पर 5 एम.एल. गर्म अगार डालते हैं जिससे वह बराबर फैल जाये इसके बाद उसे ठण्डा कर सेट होने के लिए छोड़ दिया जाता है। इसे फ्रेश बनाया जाता है। हांलाकि इसे पेट्री डिश में गीले फिल्टर पेपर पर रखकर गीला करके फ्रिज में स्टोर किया जा सकता है।

इलेक्ट्रोफोरेसिस विधिः–

1. इलेक्ट्रोफोरेसिस चैम्बर के कम्पार्टमेंट ट्रिस बफर द्वारा भर दिये जाते हैं। फिल्टर पेपर को गीला करके दोनों ओर रख दिया जाता है।
2. अगार प्लेट पर पेशेन्ट का सेम्पल हीमोलायसेट बना हुआ 1 से 3 माइक्रोलीटर एप्लीकेटर द्वारा लगभग 1.5 से.मी. प्लेट के एक सिरे से लगाया जाता है। सेम्पल के साथ नार्मल कन्ट्रोल या एबनार्मल कन्ट्रोल हीमोलायसेट भी लगा दिया जाता है।
3. स्लाइड या प्लेट को फिल्टर पेपर पर टेंक में दोनों ओर छूते हुये अगार साइड नीचे करके रखा जाता है। सेम्पल व कन्ट्रोल जहां लगे होते हैं वह निगेटिव इलेक्ट्रोड की तरफ रखे जाते हैं। जिससे सेम्पल पॉजिटिव इलेक्ट्रोड की ओर बढ़ते है या मूव करते हैं।

इसके पश्चात कान्सटेट करन्ट प्रवाह पावर सप्लाई से किया जाता है जो 10 एम.ए. हर स्लाइड के लिए होता है। लगभग एक घण्टे में हीमोग्लोबिन्स का सेपरेशन हो जाता है। इसके बाद करन्ट प्रवाह बन्द करके प्लेट निकाल कर स्टेनिग की जाती हैं।

इसके लिये एमाइडो ब्लैक स्टेन में एगार प्लेट को डुबो कर 2 से 10 मिनट तक रखा जाता है कि निकाल कर 5 प्रतिशत एसिटक एसिड सलूशन में लगभग 2 घण्टे से या 6 घण्टे रात भर डुबोकर रखा जाता है फिर इसको 2 प्रतिशत एसिटक एसिड से और रिन्स करके साथ किया जाता है। इसके बाद हीमोग्लोबिन बैंड साथ दिखने लगते हैं। इसके बाद प्लेट को रूम टेम्परेचर पर सुखाते है या ओवन में 80^0C पर 1 से दो घण्टे में सुखा लेते हैं।

एल्केलाइन पी.एच. पर इस विधि से हीमोग्लोबिन इलेक्ट्रोफोरिसस करने से HbA, HbA2, HbF, HbS (Hb D) HbE, HbH, Hb Barts, HbC व अन्य हीमोग्लोबिन सेप्रेट हो जाते हैं व पहचाने जा सकते हैं किन्तु जिनकी मोबिलिटी एक जैंसी होती उनके लिए अन्य विधियों का उपयोग किया जाता है।